संवादसेतु

मीडिया का आत्मावलोकन

अंक : 2 पृष्ठ : 15 अगस्त 2011 नई दिल्ली

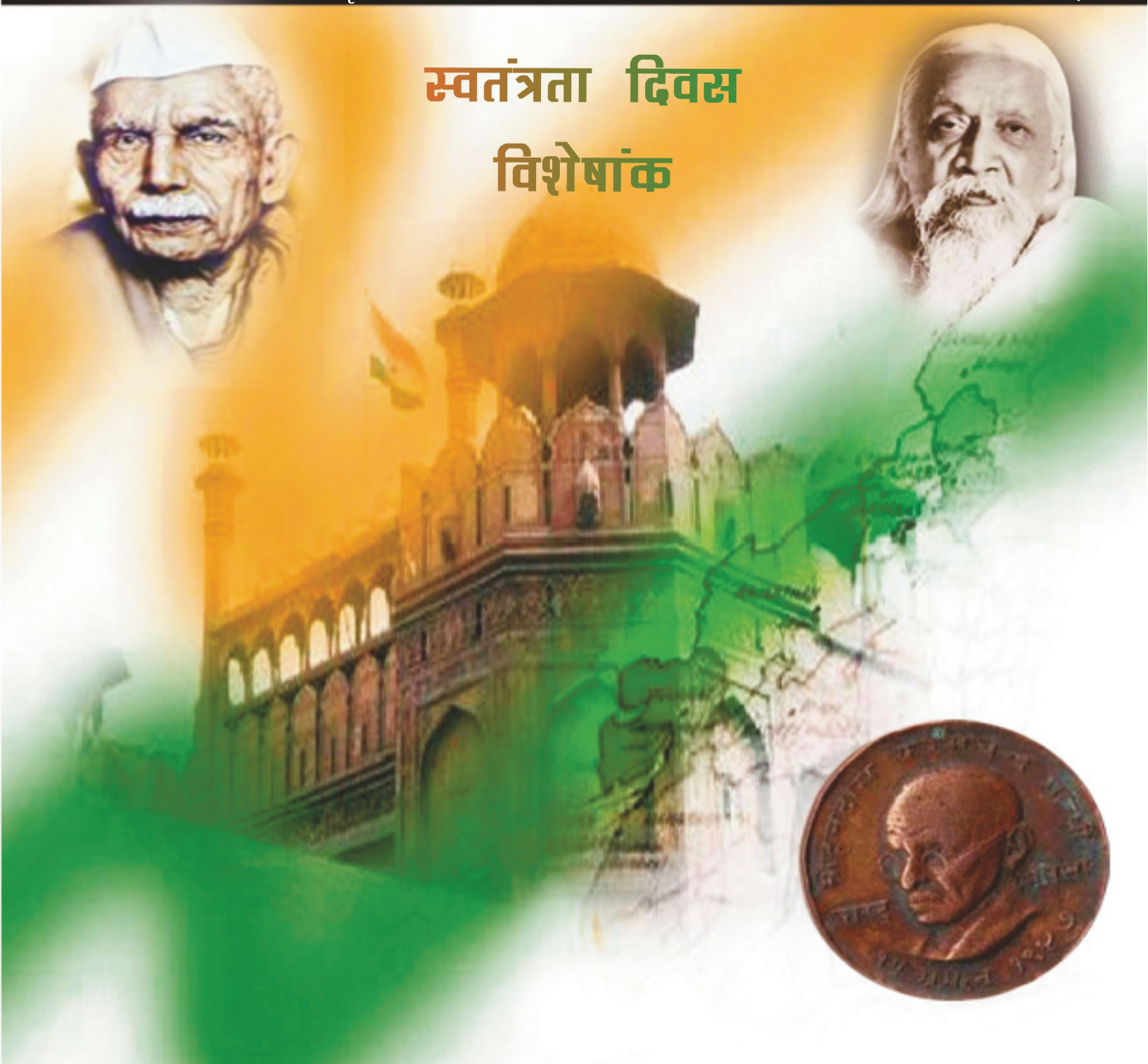

जला अस्थियां बारी-बारी, सुलगायी जिनने चिनगारी,
जो चढ़ गये राष्ट्रवेदी पर, लिये बिना जीवन का मोल।
कलम आज उनकी जय बोल।।

संवादसेतु

संपादक

आशुतोष

संपादक मंडल

रंजन कुमार

अमल कुमार श्रीवास्तव

नेहा जैन

सूर्यप्रकाश

वंदना शर्मा

कार्यालय

प्रेरणा, सी–56/20,
सेक्टर–62, नोएडा

संपर्क:

0120-2400335

mail@samvadsetu.com

वेब : samvadsetu.com

अनुरोध

संवादसेतु के इस पहल पर आपकी टिप्पणी एवं सुझावों का स्वागत है। अपनी टिप्पणी एवं सुझाव कृपया उपरोक्त ई–मेल पर अवश्य भेजें।

अनुक्रमणिका

संपादकीय 2

आवरण कथा
मिशन, प्रोफेशन और कमर्शियलाइजेशन... 3

न्यू मीडिया
वेब मीडिया का बढ़ता क्षितिज 5

चौथा स्तंभ
प्रेस पर अंकुश की मानसिकता 6

विचार
पूंजीपतियों के चरणों में अर्पित पत्रकारिता– माखनलाल चतुर्वेदी 8

साक्षात्कार
मीडिया समाज हित से कट गया है– जवाहर लाल कौल 9

श्रद्धा सुमन
वैचारिक कांति के अग्रदूत : महर्षि अरविंद 11

परिचर्चा
मिशन से प्रोफेशन तक का सफर 12

शोध
दिल्ली की साहित्यिक पत्र–पत्रिकाएं : स्वाधीनता के बाद 13

लेख
पूंजी प्रवाह के आगे नतमस्तक 'पत्रकारिता' 14

मीडिया शब्दावली 16

अकबर इलाहाबादी ने लिखा, जब तोप मुकाबिल हो, अखबार निकालो। उनको लगता था कि कलम की तासीर तोप का रुख बदल सकती है।

भारत में पत्रकारिता की मुख्यधारा का विकास ही परकीय व्यवस्था के विरुद्ध हथियार के रूप में हुआ। इसलिये हर स्वतंत्रता सेनानी ने अंग्रेजों की दमन नीति का मुकाबला करने के लिये अखबार निकाला। महर्षि अरविन्द, महात्मा गांधी और माखनलाल चतुर्वेदी, जिनके चित्रों को हमने इस अंक में आवरण पृष्ठ पर स्थान दिया है, ने विदेशी दासता के खिलाफ कलम को ही अपना हथियार बनाया और आजादी हासिल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

आज देश के 64 वें स्वतंत्रता दिवस पर चित्र बदला हुआ दिखता है। पत्रकारिता के शिखर पर विराजमान लोगों के संबंध आज राष्ट्रविरोधी शक्तियों के साथ साबित हो रहे हैं। कलम की नोक अब तोप के मुकाबिल नहीं बल्कि तोप के साथ खड़ी है।

पत्रकारिता में कदम रखने वाले नवोदित पत्रकार इस घटना से भौचक्के हैं। कल तक जिनके चेहरों में वे गांधी और अरविन्द का चेहरा ढूंढ़ते थे, आज उन चेहरों के पीछे से गुलाम नबी फई का खूनी चेहरा झांक रहा है। उन्हें तोप मुकाबिल होने पर कलम निकालने का उपदेश तो मिला, लेकिन कलम ही जब मुकाबिल हो तो क्या किया जाये, यह नहीं बताया गया। नया पत्रकार अपने–आपको आज अभिमन्यु के समान चक्रव्यूह के आखिरी दरवाजे पर लहू–लुहान खड़े पाता है जहां उसके अपने ही उसका वध करने को आतुर हैं।

संवादसेतु का यह अंक स्वतंत्रता दिवस की हार्दिक शुभकामनाओं के साथ पत्रकारों की नयी पीढ़ी को एक नया विश्वास दिलाना चाहता है। इस प्रकार की घटनाओं का प्रतीकात्मक अर्थ केवल इतना ही है कि अंधेरे के खिलाफ अभी लड़ाई बाकी है। विश्वास करें कि जिन कलमों की धार घिस जाती है उनकी जगह कूड़ेदान में होती है। विश्व की सबसे प्राचीन संस्कृति और दुनियां के सबसे बड़े लोकतंत्र के चौथे स्तंभ की भूमिका जिन्हें निभानी है उनकी कलम में धार चाहिये और स्याही में चमक।

भारत में बलिदानों की परंपरा रही है। यह बलिदान क्रांतिकारियों ने भी दिये हैं और पत्रकारों ने भी। संवादसेतु के पिछले अंक में हमने ऐसे बलिदानी पत्रकारों की सूची छापी है जिन्होंने स्वतंत्र भारत में अपना कर्तव्यपालन करते हुए अपना जीवन होम किया।

स्वतंत्रता दिवस पर ऐसे समस्त देशभक्त हुतात्माओं को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए सुप्रसिद्ध कवि और क्रांतिकारी स्व. रामप्रसाद बिस्मिल की पंक्तियां स्मरण आती हैं –

''अब तो खा बैठे हैं चित्तौड़ के गढ़ की कसमें,
देशभक्ति की अदा होती हैं यूं ही रसमें।''

भवदीय
संपादक

मिशन, प्रोफेशन और कमर्शियलाइजेशन...

नेहा जैन

''एक समय आएगा, जब हिंदी पत्र रोटरी पर छपेंगे, संपादकों को ऊंची तनख्वाहें मिलेंगी, सब कुछ होगा किन्तु उनकी आत्मा मर जाएगी, सम्पादक, सम्पादक न होकर मालिक का नौकर होगा।''

स्वतंत्रता आंदोलन को अपनी कलम के माध्यम से तेज करने वाले बाबूराव विष्णु पराड़कर जी ने यह बात कही थी। उस समय उन्होंने शायद पत्रकारिता के भविष्य को भांप लिया था। पत्रकारिता की शुरूआत मिशन से हुई थी जो आजादी के बाद धीरे–धीरे प्रोफेशन बन गया और अब इसमें कमर्शियलाइजेशन का दौर चल रहा है।

स्वतंत्रता आंदोलन को सफल करने में पत्रकारिता का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उस समय पत्रकारिता को मिशन के तौर पर लिया जाता था और पत्रकारिता के माध्यम से निःस्वार्थ भाव से सेवा की जाती थी। भारत में पत्रकारिता की नींव रखने वाले अंग्रेज ही थे। भारत में सबसे पहला समाचार पत्र जेम्स अगस्टस हिक्की ने वर्ष 1780 में 'बंगाल गजट' निकाला। अंग्रेज होते हुए भी उन्होंने अपने पत्र के माध्यम से अंग्रेजी शासन की आलोचना की, जिससे परेशान गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स ने उन्हें प्रदत्त डाक सेवाएं बंद कर दी और उनके पत्र प्रकाशन के अधिकार समाप्त कर दिए। उन्हें जेल में डाल दिया गया और जुर्माना लगाया गया। जेल में रहकर भी उन्होंने अपने कलम की पैनी धार को कम नहीं किया और वहीं से लिखते रहें। हिक्की ने अपना उद्देश्य घोषित किया था– 'अपने मन और आत्मा की स्वतंत्रता के लिए अपने शरीर को बंधन में डालने में मुझे मजा आता है।'

हिक्की गजट द्वारा किए गए प्रयास के बाद भारत में कई समाचार पत्र आए जिनमें ब्रिटिश शासन के खिलाफ आवाजें उठने लगी थी। समाचार पत्रों की आवाज दबाने के लिए समय–समय पर प्रेस सेंसरशिप व अधिनियम लगाए गए लेकिन इसके बावजूद भी पत्रकारिता के उद्देश्य में कोई परिवर्तन नहीं आया। भारत में सर्वप्रथम वर्ष 1816 में गंगाधर भट्टाचार्य ने बंगाल गजट का प्रकाशन किया। इसके बाद कई दैनिक, साप्ताहिक व मासिक पत्रों का प्रकाशन प्रारंभ हुआ जिन्होंने ब्रिटिश अत्याचारों की जमकर भर्त्सना की।

राजा राम मोहन राय ने पत्रकारिता द्वारा सामाजिक पुनर्जागरण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। 'ब्राह्मैनिकल मैगजीन' के माध्यम से उन्होंने ईसाई मिशनरियों के साम्प्रदायिक षड्यंत्र का विरोध किया तो 'संवाद कौमुदी' द्वारा उन्होंने महिलाओं की स्थिति में सुधार करने का प्रयास किया। 'मीरात–उल–अखबार' के तेजस्वी होने के कारण इसे अंग्रेज शासकों की कुदृष्टि का शिकार होना पड़ा।

जेम्स बकिंघम ने वर्ष 1818 में 'कलकत्ता क्रोनिकल' का संपादन करते हुए अंग्रेजी शासन की कड़ी आलोचना की, जिससे घबराकर अंग्रेजों ने उन्हें देश निकाला दे दिया। इंग्लैंड जाकर भी उन्होंने 'आरियेंटल हेराल्ड' पत्र में भारतीयों पर हो रहे अत्याचारों को उजागर किया।

हिन्दी भाषा में प्रथम समाचार पत्र लाने का श्रेय पं. जुगल किशोर को जाता है। उन्होंने 1826 में 'उदन्त मार्तण्ड' पत्र निकाला और अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों की आलोचना की। उन्हें अंग्रेजों ने प्रलोभन देने की भी कोशिश की लेकिन उन्होंने इसे ठुकरा दिया और आर्थिक समस्याओं से जूझते हुए भी पत्रकारिता के माध्यम से राष्ट्रवाद की मशाल को और तीव्र किया।

1857 की विद्रोह की खबरें दबाने के लिए 'गैगिंग एक्ट' लागू किया। उस समय स्वतंत्रता आंदोलन के नेता अजीमुल्ला खां ने दिल्ली से 'पयामे आजादी' निकाला जिसने ब्रिटिश कुशासन की जमकर आलोचना की। ब्रिटिश सरकार ने इस पत्र को बंद करने का भरसक प्रयास किया और इस अखबार की प्रति किसी के पास पाए जाने पर उसे कठोर यातनाएं दी जाती थी। इसके बाद 'इण्डियन घोष', 'द हिन्दू', 'पायनियर', 'अमृत बाजार पत्रिका', 'द ट्रिब्यून' जैसे कई समाचार पत्र सामने आए।

लोकमान्य तिलक ने पत्रकारिता के माध्यम से उग्र राष्ट्रवाद की स्थापना की। उनके समाचार पत्र 'मराठा' और 'केसरी' उग्र प्रवृत्ति का जीता जागता उदाहरण है। गांधीजी ने पत्रकारिता के माध्यम से

पूरे समाज को एकजुट करने का कार्य किया और स्वाधीनता संग्राम की दिशा सुनिश्चित की। 'नवभारत', 'नवजीवन', 'हरिजन', 'हरिजन सेवक', 'हरिजन बंधु', 'यंग इंडिया' आदि समाचार पत्र गांधी जी के विचारों के संवाहक थे। गांधी जी राजनीति के अलावा अन्य विषयों पर भी लिखते थे। उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों को भी उजागर कर इसे समाप्त करने पर बल दिया। गणेश शंकर विद्यार्थी ने कानपुर से 'प्रताप' नामक पत्र निकाला जो अंग्रेजी सरकार का घोर विरोधी बन गया। अरविंद घोष ने 'वंदे मातरम', 'युगांतर', 'कर्मयोगी' और 'धर्म' आदि का सम्पादन किया। बाबू राव विष्णु पराड़कर ने वर्ष 1920 में 'आज' का संपादन किया जिसका उद्देश्य आजादी प्राप्त करना था।

आजादी से पहले पत्रकारिता को मिशन माना जाता था और भारत के पत्रकारों ने अपनी कलम की ताकत आजादी प्राप्त करने में लगाई। आजादी मिलने के बाद समाचार पत्रों के स्वरूप में परिवर्तन आना स्वाभाविक था क्योंकि उनका आजादी का उद्देश्य पूरा हो चुका था। समाचार–पत्रों को आजादी मिलने और साक्षरता दर बढ़ने के कारण आजादी के बाद बड़ी संख्या में समाचार–पत्रों एवं पत्रिकाओं का प्रकाशन होने लगा। साथ ही रेडिया एवं टेलीविजन के विकास के कारण मीडिया जगत में बड़ा बदलाव देखा गया। स्वतंत्रता से पहले जिस पत्रकारिता को मिशन माना जाता था अब धीरे–धीरे वह 'प्रोफेशन' में बदल रही थी।

वर्ष 1947 से लेकर वर्ष 1975 तक पत्रकारिता जगत में विकासात्मक पत्रकारिता का दौर रहा। नए उद्योगों के खुलने और तकनीकी विकास के कारण उस समय समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में भारत के विकास की खबरें प्रमुखता से छपती थी। समाचार–पत्रों में धीरे–धीरे विज्ञापनों की संख्या बढ़ रही थी व इसे रोजगार का साधन माना जाने लगा था।

वर्ष 1975 में एक बार फिर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर काले बादल छा गए, जब तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने आपातकाल की घोषणा कर मीडिया पर सेंसरशिप ठोक दी। विपक्ष की ओर से भ्रष्टाचार, कमजोर आर्थिक नीति को लेकर उनके खिलाफ उठ रहे सवालों के कारण इंदिरा गांधी ने प्रेस से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता छीन ली। लगभग 19 महीनों तक चले आपातकाल के दौरान भारतीय मीडिया शिथिल अवस्था में थी। उस समय दो समाचार पत्रों 'द इंडियन एक्सप्रेस' और 'द स्टेट्समेन' ने उनके खिलाफ आवाज उठाने की कोशिश की तो उनकी वित्तीय सहायता रोक दी गई। इंदिरा गांधी ने भारतीय मीडिया की कमजोर नस को अच्छे से पहचान लिया था। उन्होंने मीडिया को अपने पक्ष में करने के लिए उनको दी जाने वाली वित्तीय सहायता में इजाफा कर दिया और प्रेस सेंसरशिप लागू कर दी। उस समय कुछ पत्रकार सरकार की चाटुकारिता में स्वयं के मार्ग से भटक गए और कुछ चाहकर भी सरकार के विरूद्ध स्वतंत्र रूप से अपने विचारों को नहीं प्रकट कर सकें। कुछ पत्रकार ऐसे भी थे जो सत्य के मार्ग पर अडिग रहें। आपातकाल के दौरान समाचार पत्रों में सरकारी प्रेस विज्ञप्तियां ही ज्यादा नजर आती थी। कुछ सम्पादकों ने सेंसरशिप के विरोध में सम्पादकीय खाली छोड़ दिया। लालकृष्ण आडवाणी ने अपनी एक पुस्तक में कहा है– ''उन्होंने हमें झुकने के लिए कहा और हमने रेंगना शुरू कर दिया।''

1977 में जब चुनाव हुए तो मोरारजी देसाई की सरकार आई और उन्होंने प्रेस पर लगी सेंसरशिप को हटा दिया। इसके बाद समाचार पत्रों ने आपातकाल के दौरान छिपाई गई बातों को छापा। पत्रकारिता द्वारा आजादी के दौरान किया गया संघर्ष बहुत पीछे छूट चुका था और पत्रकारिता अब पेशे में तब्दील हो चुकी थी।

भारत में एक और ऐसी घटना घटी जिसने पत्रकारिता के स्वरूप को एक बार फिर बदल दिया। वर्ष 1991 की उदारीकरण की नीति और वैश्वीकरण के कारण पत्रकारिता पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा और पत्रकारिता में धीरे–धीरे 'कमर्शियलाइजेशन' का दौर आने लगा। आम जनता को सत्य उजागर कर प्रभावित करने वाले मीडिया पर राजनीति व बाजार का प्रभाव पड़ना शुरू हो गया। पत्रकारों की कलम को बाजार ने प्रभावित कर खरीदना शुरू कर दिया। वर्तमान दौर कमर्शिलाइजेशन का ही दौर है, जिसमें मीडिया के लिए समाचारों से ज्यादा विज्ञापन का महत्व है। बाजार में उपलब्ध उत्पादों का प्रचार समाचार बनाकर किया जा रहा है। आज समाचार का पहला पृष्ठ भी बाजार खरीदने लगा है। वहीं पिछले कुछ दिनों में पत्रकारिता में भ्रष्टाचार के जो मामले सामने आए उसको देखकर पत्रकारिता का उद्देश्य धुंधला होता नजर आता है। 2जी स्पेक्ट्रम मामले में जिस तरह कुछ पत्रकारों की भूमिका सामने आई उसको देखकर अब आम जन का विश्वास भी मीडिया से हट रहा है।

आजादी से पहले पत्रकारों ने किसी भी प्रलोभनों में आए बिना निःस्वार्थ भाव से अपना कर्तव्य निभाया था। अंग्रेजों द्वारा प्रेस पर रोक लगाने के बाद भी उन्होंने अपनी कलम को नहीं रोका, लेकिन आज परिस्थितियां बदलती नजर आ रहीं हैं। पत्रकारिता आज सेवा से आगे बढ़कर व्यवसाय में परिवर्तित हो चुकी है। यहां पर एक बार फिर पराड़कर जी के वही शब्द याद आते हैं जिनमें उन्होंने पत्रकारिता के भविष्य को भांप लिया था– ''एक समय आएगा, जब हिंदी पत्र रोटरी पर छपेंगे, संपादकों को ऊंची तनख्वाहें मिलेंगी, सब कुछ होगा किन्तु उनकी आत्मा मर जाएगी, सम्पादक, सम्पादक न होकर मालिक का नौकर होगा।'' ■

वेब मीडिया का बढ़ता क्षितिज

वंदना शर्मा

वर्तमान दौर संचार क्रांति का दौर है। संचार क्रांति की इस प्रक्रिया में जनसंचार माध्यमों के भी आयाम बदले हैं। आज की वैश्विक अवधारणा के अंतर्गत सूचना एक हथियार के रूप में परिवर्तित हो गई है। सूचना जगत गतिमान हो गया है, जिसका व्यापक प्रभाव जनसंचार माध्यमों पर पड़ा है। पारंपरिक संचार माध्यमों समाचार पत्र, रेडियो और टेलीविजन की जगह वेब मीडिया ने ले ली है।

वेब पत्रकारिता आज समाचार पत्र–पत्रिका का एक बेहतर विकल्प बन चुका है। न्यू मीडिया, ऑनलाइन मीडिया, साइबर जर्नलिज्म, और वेब जर्नलिज्म जैसे कई नामों से वेब पत्रकारिता को जाना जाता है। वेब पत्रकारिता प्रिंट और ब्रॉडकास्टिंग मीडिया का मिला–जुला रूप है। यह टेक्स्ट, पिक्चर्स, ऑडियो और वीडियो के जरिये स्क्रीन पर हमारे सामने है। माउस के सिर्फ एक क्लिक से किसी भी खबर या सूचना को पढ़ा जा सकता है। यह सुविधा 24 घंटे और सातों दिन उपलब्ध होती है जिसके लिए किसी प्रकार का मूल्य नहीं चुकाना पड़ता।

वेब पत्रकारिता का एक स्पष्ट उदाहरण बनकर उभरा है विकीलीक्स। विकीलीक्स ने खोजी पत्रकारिता के क्षेत्र में वेब पत्रकारिता का जमकर उपयोग किया है। खोजी पत्रकारिता अब तक राष्ट्रीय स्तर पर होती थी लेकिन विकीलीक्स ने इसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयोग किया व अपनी रिपोर्टों से खुलासे कर पूरी दुनिया में हलचल मचा दी।

भारत में वेब पत्रकारिता को लगभग एक दशक बीत चुका है। हाल ही में आए ताजा आंकड़ों के अनुसार इंटरनेट के उपयोग के मामले में भारत तीसरे पायदान पर आ चुका है। आधुनिक तकनीक के जरिये इंटरनेट की पहुंच घर–घर तक हो गई है। युवाओं में इसका प्रभाव अधिक दिखाई देता है। परिवार के साथ बैठकर हिंदी खबरिया चैनलों को देखने की बजाए अब युवा इंटरनेट पर वेब पोर्टल से सूचना या ऑनलाइन समाचार देखना पसंद करते हैं। समाचार चैनलों पर किसी सूचना या खबर के निकल जाने पर उसके दोबारा आने की कोई गारंटी नहीं होती, लेकिन वहीं वेब पत्रकारिता के आने से ऐसी कोई समस्या नहीं रह गई है। जब चाहे किसी भी समाचार चैनल की वेबसाइट या वेब पत्रिका खोलकर पढ़ा जा सकता है।

लगभग सभी बड़े–छोटे समाचार पत्रों ने अपने 'ई–पेपर' यानी इंटरनेट संस्करण निकाले हुए हैं। भारत में 1995 में सबसे पहले चेन्नई से प्रकाशित होने वाले 'हिंदू' ने अपना ई–संस्करण निकाला। 1998 तक आते–आते लगभग 48 समाचार पत्रों ने भी अपने ई–संस्करण निकाले। आज वेब पत्रकारिता ने पाठकों के सामने ढेरों विकल्प रख दिए हैं। वर्तमान समय में राष्ट्रीय स्तर के समाचार पत्रों में जागरण, हिन्दुस्तान, भास्कर, डेली एक्सप्रेस, इकोनॉमिक टाइम्स और टाइम्स ऑफ इंडिया जैसे सभी पत्रों के ई–संस्करण मौजूद हैं।

भारत में समाचार सेवा देने के लिए गूगल न्यूज, याहू, एमएसएन, एनडीटीवी, बीबीसी हिंदी, जागरण, भड़ास फॉर मीडिया, ब्लॉग प्रहरी, मीडिया मंच, प्रवक्ता, और प्रभासाक्षी प्रमुख वेबसाइट हैं जो अपनी समाचार सेवा देते हैं।

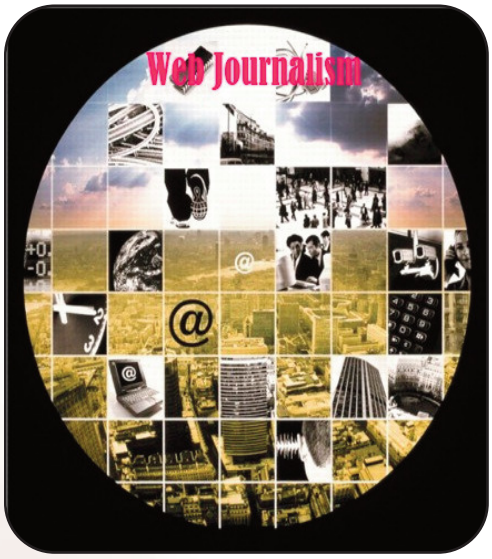

वेब पत्रकारिता का बढ़ता विस्तार देख यह समझना सहज ही होगा कि इससे कितने लोगों को रोजगार मिल रहा है। मीडिया के विस्तार ने वेब डेवलपरों एवं वेब पत्रकारों की मांग को बढ़ा दिया है। वेब पत्रकारिता किसी अखबार को प्रकाशित करने और किसी चैनल को प्रसारित करने से अधिक सस्ता माध्यम है। चैनल अपनी वेबसाइट बनाकर उन पर ब्रेकिंग न्यूज, स्टोरी, आर्टिकल, रिपोर्ट, वीडियो या साक्षात्कार को अपलोड और अपडेट करते रहते हैं। आज सभी प्रमुख चैनलों (आईबीएन, स्टार, आजतक आदि) और अखबारों ने अपनी वेबसाइट बनाई हुई हैं। इनके लिए पत्रकारों की नियुक्ति भी अलग से की जाती है।

सूचनाओं का 'डाकघर' कही जाने वाली संवाद समितियां जैसे पीटीआई, यूएनआई, एएफपी और रायटर आदि अपने समाचार तथा अन्य सभी सेवाएं ऑनलाइन देती हैं।

कम्प्यूटर या लैपटॉप के अलावा एक और ऐसा साधन 'मोबाइल फोन' जुड़ा है जो इस सेवा को विस्तार देने के साथ उभर रहा है। फोन पर ब्रॉडबैंड सेवा ने आमजन को वेब पत्रकारिता से जोड़ा है। पिछले दिनों मुंबई में हुए सीरियल ब्लास्ट की ताजा तस्वीरें और वीडियो बनाकर आम लोगों ने वेब जगत के साथ साझा की। हाल ही में दूरसंचार मंत्री कपिल सिब्बल ने गांवों में पंचायतों को ब्रॉडबैंड सुविधा मुहैया कराने का प्रस्ताव रखा है। इससे पता चलता है कि भविष्य में यह सुविधाएं गांव–गांव तक पहुंचेंगी।

वेब पत्रकारिता ने जहां एक ओर मीडिया को एक नया क्षितिज दिया है वहीं दूसरी ओर यह मीडिया का पतन भी कर रहा है। इंटरनेट पर हिंदी में अब तक अधिक काम नहीं किया गया है, वेब पत्रकारिता में भी अंग्रेजी ही हावी है। पर्याप्त सामग्री न होने के कारण हिंदी के पत्रकार अंग्रेजी वेबसाइटों से ही खबर लेकर अनुवाद कर अपना काम चलाते हैं। वे घटनास्थल तक भी नहीं जाकर देखना चाहते कि असली खबर है क्या?

यह कहा जा सकता है कि भारत में वेब पत्रकारिता ने एक नई मीडिया संस्कृति को जन्म दिया है। अंग्रेजी के साथ–साथ हिंदी पत्रकारिता को भी एक नई गति मिली है। युवाओं को नये रोजगार मिले हैं। अधिक से अधिक लोगों तक इंटरनेट की पहुंच हो जाने से यह स्पष्ट है कि वेब पत्रकारिता का भविष्य बेहतर है। आने वाले समय में यह पूर्णतः विकसित हो जाएगी। ■

प्रेस पर अंकुश की मानसिकता

अमल कुमार श्रीवास्तव

जनमत निर्माण एवं समाज को दिशा निर्देश देने का महत्वपूर्ण दायित्व प्रेस पर है। ''जहां तक क्रांतिकारी आंदोलन का सम्बन्ध है भारत का क्रांतिकारी आंदोलन बन्दूक और बम के साथ नहीं समाचार पत्रों से शुरू हुआ'' उक्त बातें जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी ने युगान्तर में कही है, किन्तु जनचेतना की शुरूआत करने वाले इस चौथे स्तम्भ की स्वतंत्रता पर आजादी के पूर्व से ही अंकुश लगाए जाते रहें हैं।

29 जनवरी 1780 को जेम्स अगस्टस हिक्की द्वारा प्रारम्भ किए गए साप्ताहिक 'कलकत्ता जनरल एडवरटाईजर' एवं 'हिक्की गजट' से भारत में पत्रकारिता की विधिवत शुरूआत मानी जाती है। इसका आदर्श वाक्य था– 'सभी के लिए खुला फिर भी किसी से प्रभावित नहीं।' हेस्टिंग्स की शासन शैली की कटु आलोचना का पुरस्कार हिक्की को जेल यातना के रूप में मिला।

सत्ता के दमन के विरूद्ध संघर्ष के कारण गवर्नर वारेन हेस्टिंग्स ने हिक्की के पत्र प्रकाशन के अधिकार को समाप्त कर दिया। इस समाचार पत्र का संपादन मात्र दो वर्षों (1780–82) तक ही रहा। कालान्तर में भारतीय पत्रकारिता ने इसी साहसपूर्ण मार्ग का अनुसरण करते हुए सत्य एवं न्याय के पक्ष में संघर्ष का बिगुल बजाया। ऐसे में सत्ता से टकराव स्वाभाविक ही था। पराधीन भारत के इतिहास के अनेक पृष्ठ अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य के प्रति समाचार पत्रों की आस्था के उदाहरणों से भरे पड़े हैं। अंग्रेजी सरकार राष्ट्रीय और सामाजिक हितों एवं दायित्वों की आड़ में अपने स्वार्थों के पोषण के लिए प्रेस पर किसी न किसी प्रकार का नियंत्रण बनाये रखना चाहती थी।

लार्ड वेलजली द्वारा 'सेंसर आदेश' (1799 में) लागू कर दिया गया। समाचार पत्रों के अंत में मुद्रक का नाम व पता प्रकाशित करना अनिवार्य कर दिया गया। संपादक व संचालन के नाम, पते की सूचना सरकार के सचिव को देनी भी अनिवार्य कर दी गई। किसी भी समाचार के प्रकाशन से पूर्व सचिव द्वारा जांच के आदेश के प्रावधान बनाए गए। रविवार को समाचार पत्र के प्रकाशन पर पाबंदी लगा दी गई। इस सेंसरशिप को लार्ड हेस्टिंग्स ने सन् 1813 में समाप्त कर दिया।

सन् 1823 में एडम गवर्नर जनरल ने 'एडम अधिनियम' जारी किया जिसमें प्रेस के लिए लाइसेंस लेना अनिवार्य कर दिया गया। सर चार्ल्स मेट्काफ प्रेस की स्वतंत्रता के प्रति उदार थे। उनके द्वारा सन् 1835 में 'मेट्काफ एक्ट' पारित किया गया। इसके साथ–साथ सन् 1823 के 'एडम एक्ट' में भी परिवर्तन किया गया। भारतीय पत्रकारिता को एक बार फिर प्रभावित करने के लिए अंग्रेजी शासन व्यवस्था द्वारा सन् 1857 में 'गैगिंग एक्ट' लागू किया गया और सन् 1823 के 'एडम एक्ट' का प्रत्यारोपण किया गया और पुनः लाइसेंस लेने का अधिनियम लागू कर दिया गया। 1864 में वायसराय लार्ड डफरिंग के कार्यकाल में 'शासकीय गोपनीयता कानून' था, जिसका उद्देश्य उन समाचार पत्रों के खिलाफ कार्यवाही करना था जो गुप्त सरकारी दस्तावेज प्रकाशित करते थे।

सन् 1835 के 'मेट्काफ एक्ट' से मुक्ति दिलाने के लिए लार्ड लारेंस ने सन् 1867 में 'समाचार पत्र अधिनियम' लागू किया। इस अधिनियम के अनुसार प्रेस के मालिकों को मजिस्ट्रेट के सम्मुख घोषणा पत्र देना आवश्यक था। सन् 1867 का अधिनियम कुछ संशोधनों के साथ आज भी चला आ रहा है। इसका उद्देश्य छापेखानों को नियंत्रित करना है।

भारतीय समाचारपत्रों को कुचलने के लिए सन् 1878 में 'वर्नाक्यूलर एक्ट' लगाया गया। इस कानून के तहत सरकार ने बिना न्यायालय के आदेश के भारतीय भाषाओं के प्रेस के मुद्रकों और प्रकाशकों को

जमानत जमा करने तथा प्रतिज्ञा पत्र देने के आदेश दिए, ताकि वह ऐसी बातों का प्रकाशन नहीं करेंगे जिससे सरकार के प्रति घृणा उत्पन्न हो या समाज में वैमनस्य फैले। इसके साथ ही अवांछनीय सामग्री को जब्त करने के आदेश भी दिए गए। इस कानून की भारतीयों ने कड़ी निन्दा की। अंग्रेजी समाचार पत्रों को इस अधिनियम से मुक्त रखा गया जिससे भारतीयों में रोष और बढ़ गया। सन् 1878 के 'वर्नाक्यूलर एक्ट' को 1881 में समाप्त किया गया।

ब्रिटिश सरकार ने सन् 1910 में 'भारतीय प्रेस अधिनियम' लगाया और भारतीय पत्रकारिता पर अपना अंकुश और भी सख्त कर दिया। इस अधिनियम के अंतर्गत मुद्रकों को 7 हजार से लेकर 10 हजार रूपए तक जमानत देने को कहा गया। किसी भी आपत्तिजनक खबर के छपने पर धनराशि जब्त करने का अधिकार मजिस्ट्रेट को दिया गया। यह कानून 12 वर्षों तक प्रभाव में रहा और सन् 1922 में इसे रद्द कर दिया गया।

सन् 1930 में वायसराय इरविन ने देशव्यापी आंदोलन को देखते हुए 'प्रेस एंड अनऑथराइज्ड न्यूज पेपर्स' अध्यादेश को मई–जून से लागू कर दिया । इस अध्यादेश द्वारा सन् 1910 की सम्पूर्ण पाबंदियों को पुनः लागू कर जमानत की राशि 500 रूपए से और अधिक बढ़ा दिया गया। इसके अतिरिक्त सरकार ने हैंडबिल व पर्चों पर भी प्रतिबंध लगा दिया।

सन् 1931 में जब पूरा देश एवं राजनेता 'गोलमेज सम्मेलन' में व्यस्त थे तो ब्रिटिश सरकार ने ऐसे समय का पूरा लाभ उठाते हुए 'प्रेस बिल 1931' के अध्यादेश को कानून के रूप में पारित करा लिया। इसके अंतर्गत सरकार ने समाचारपत्रों के शीर्षक, संपादकीय टिप्पणियों को बदलने का अधिकार भी अपने पास सुरक्षित रख लिया। इसके पश्चात सन् 1935 में भारतीय प्रशासन कांग्रेस के हाथ में आ गया और फलतः समाचार पत्रों को स्वतंत्रता प्राप्त हुई।

आपातकाल के समय अबू अब्राहम द्वारा जारी एक तस्वीर

सन् 1939 में द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ होते ही कांग्रेस सरकार को पदत्याग करना पड़ा और पत्रों की स्वतंत्रता पुनः नष्ट हो गई, जो सन् 1947 तक चली। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सन् 1950 में नया कानून बना जिसके द्वारा प्रेस की स्वतंत्रता को पुनः स्थापित किया गया।

सरकार की छत्रछाया में विकसित होती भारतीय प्रेस की गति को अवरूद्ध करने के प्रयास भी लगभग दो शताब्दी पूर्व प्रारम्भ हो गये थे जो सन् 1947 तक किसी न किसी प्रकार जारी रहें। इन बाधाओं के बावजूद भारतीय प्रेस ने संघर्ष का मार्ग नहीं छोड़ा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश में सन् 1867 में अंग्रेजों द्वारा बनाया गया प्रेस कानून ही कार्य पद्धति में लागू था, जिसमें सर्वप्रथम बड़ा संशोधन सन् 1955 में पहले प्रेस आयोग की सिफारिशों के आधार पर किया गया। इसके साल भर बाद सन् 1956 में 'रजिस्ट्रार ऑफ न्यूज पेपर्स ऑफ इंडिया (आरएनआई)' के कार्यालय ने काम शुरू किया। इसके पश्चात आजाद भारत में स्वतंत्र पत्रकारिता पर दमन का आरम्भ आपातकाल (1974–75) से शुरू हुआ।

चर्चित पत्रकार और मानवाधिकार विशेषज्ञ कुलदीप नैयर ने कहा है कि–

''इमरजेंसी भारतीय इतिहास का एक दुखद काल था, जब हमारी आजादी लगभग छिन सी गई थी और आपातकाल आज भी अनौपचारिक रूप से देश में अलग–अलग रूपों में मौजूद है, क्योंकि शासक वर्ग, नौकरशाही, पुलिस और अन्य वर्गों के पूर्ण सहयोग से अधिनायकवादी और लोकतंत्र विरोधी गतिविधियों में लिप्त है।''

आपातकाल के समय भारतीय पत्रकारिता जगत में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के नाम पर केवल सरकारी रेडियो और सरकारी चैनल अर्थात दूरदर्शन मात्र था, जिनसे वैसे भी तात्कालिक सरकार को कोई खतरा नहीं था, लेकिन देश भर के अखबारों पर लगी सेंसरशिप ने तो जैसे आम जनता की आवाज का गला ही घोंट दिया था। तात्कालिक समय में अखबारों में जो कुछ भी छपना होता था, वो संपादक की कलम से नहीं बल्कि सेंसर की कैंची से कांट–छाट करके छपती थी।

आपातकाल के समय अखबार मालिक अपने दफ्तरों में जाकर खबरों को उलटते पलटते थे और उन्हें जिन खबरों में सरकार की आलोचना व खिलाफत का अंदेशा होता, वे उस खबर को छपने से रोक देते थे। देश में लगभग 19 माह तक ऐसी स्थिति व्याप्त थी। जनता सरकार द्वारा सन् 1978 में 'द्वितीय प्रेस आयोग' का गठन किया गया, इसके गठन का मुख्य उद्देश्य आपातकाल के परिप्रेक्ष्य में प्रेस की स्वतंत्रता को सुनिश्चित करना था। मोरारजी देसाई काल में गठित इस आयोग ने अपनी रिर्पोट सन् 1982 में तैयार की, लेकिन इस चार वर्ष की अवधि में देश का राजनीतिक परिदृश्य पूरी तरह से बदल चुका था। यहां हमें यह याद रखने की आवश्यक्ता है कि प्रथम आयोग और द्वितीय आयोग के गठन के बीच 26 वर्ष का अंतराल था। इस अंतराल के बाद भारतीय प्रेस में कई परिवर्तन आ चुके थे। इसी क्रम में वर्तमान पत्रकारिता के स्तर में सुधार हेतु तृतीय प्रेस आयोग के गठन का प्रस्ताव रखा गया है।

इन सब प्रतिबंधों के बाद भी वर्तमान समय में चौथे स्तंभ की भूमिका नीचे दी गई पंक्तियों से स्पष्ट है–

जमीं बेच देंगे, गगन बेच देंगे
चमन बेच देंगे, सुमन बेच देंगे,
कलम के सिपाही अगर सो गए तो,
वतन के मसीहा वतन बेच देंगे।।

■

पूंजीपतियों के चरणों में अर्पित पत्रकारिता– माखनलाल चतुर्वेदी

सूर्यप्रकाश

वर्तमान समय में पत्रकारिता के कर्तव्य, दायित्व और उसकी भूमिका को लोग संदेह से परे नहीं मान रहे हैं। इस संदेह को वैश्विक पत्रकारिता जगत में 'न्यूज ऑफ द वर्ल्ड' और राष्ट्रीय स्तर पर राडिया प्रकरण ने बल प्रदान किया है। पत्रकारिता जगत में यह घटनाएं उन आशंकाओं का प्रादुर्भाव हैं जो पत्रकारिता के पुरोधाओं ने बहुत पहले ही जताई थीं। पत्रकारिता में पूंजीपतियों के बढ़ते प्रभाव के बारे में पत्रकारिता के महान आदर्श माखनलाल चतुर्वेदी ने कहा था–

''दुख है कि सारे प्रगतिवाद, क्रांतिवाद के न जाने किन–किन वादों के रहते हुए हमने अपनी इस महान कला को पूंजीपतियों के चरणों में अर्पित कर दिया है।'' (पत्रकारिता : इतिहास और प्रश्न – कृष्ण बिहारी मिश्र)

भारत की पत्रकारिता की कल्पना हिंदी से अलग हटकर नहीं की जा सकती है, परंतु हिंदी पत्रकारिता जगत में भी अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। भाषा के मानकीकरण की दृष्टि से यह उचित नहीं कहा जा सकता। माखनलाल चतुर्वेदी भाषा के इस संक्रमण से बिल्कुल भी संतुष्ट नहीं थे। उन्होंने कहा कि–

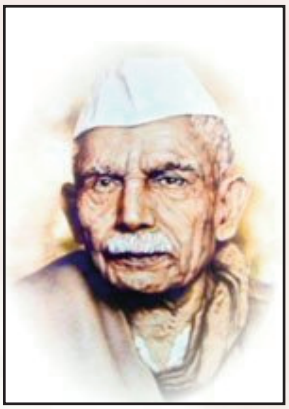

''राष्ट्रभाषा हिंदी और तरूणाई से भरी हुई कलमों का सम्मान ही मेरा सम्मान है।'' (राजकीय सम्मान के अवसर पर)

राष्ट्रभाषा हिंदी के विषय में माखनलाल जी ने कहा था–

''जो लोग देश में एक राष्ट्रभाषा चाहते हैं, वे प्रांतों की भाषाओं का नाश नहीं चाहते। केवल विचार समझने और समझाने के लिए राष्ट्रभाषा का अध्ययन होगा, बाकि सब काम मातृभाषाओं में होंगे। ऐसे दुरात्माओं की देश को जरूरत नहीं, जो मातृभाषाओं को छोड़ दें।'' (पत्रकारिता के युग निर्माता– माखनलाल चतुर्वेदी, शिवकुमार अवस्थी)

पत्रकारिता पर सरकारी नियंत्रण एक ऐसा मुद्दा है, जो हमेशा जीवंत रहा है। सरकारी नियंत्रण के बारे में भी माखनलाल चतुर्वेदी ने अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए अपने जीवनी लेखक से कहा था–

''जिला मजिस्ट्रेट मिओ मिथाइस से मिलने पर जब मुझसे पूछा गया कि एक अंग्रेजी वीकली के होते हुए भी मैं एक हिंदी साप्ताहिक क्यों निकालना चाहता हूं तब मैंने उनसे निवेदन किया कि आपका अंग्रेजी साप्ताहिक तो दब्बू है। मैं वैसा समाचार पत्र नहीं निकालना चाहता हूं। मैं एक ऐसा पत्र निकालना चाहूंगा कि ब्रिटिश शासन चलता–चलता रूक जाए।'' (पत्रकारिताः इतिहास और प्रश्न – कृष्ण बिहारी मिश्र)

माखनलाल चतुर्वेदी ने पत्रकारिता के ऊंचे मानदंड स्थापित किए थे। उनकी पत्रकारिता में राष्ट्र विरोधी किसी भी बात को स्थान नहीं दिया जाता था। यहां तक कि माखनलाल जी महात्मा गांधी के उन वक्तव्यों को भी स्थान नहीं देते थे जो क्रांतिकारी गतिविधियों के विरूद्ध होते थे। सरकारी दबाव में कार्य करने वाली पत्रकारिता के विषय में उन्होंने अपनी नाराजगी इन शब्दों में व्यक्त की थी–

''मैंने तो जर्नलिज्म में साहित्य को स्थान दिया था। बुद्धि के ऐरावत पर म्यूनिसिपल का कूड़ा ढोने का जो अभ्यास किया जा रहा है अथवा ऐसे प्रयोग से जो सफलता प्राप्त की जा रही है उसे मैं पत्रकारिता नहीं मानता।'' (पत्रकारिताः इतिहास और प्रश्न– कृष्ण बिहारी मिश्र)

वर्तमान समय में हिंदी समाचारपत्रों को पत्र का मूल्य कम रखने के लिए और अपनी आय प्राप्त करने के लिए विज्ञापनों पर निर्भर रहना पड़ता है, क्योंकि पाठक न्यूनतम मूल्य में ही पत्र को लेना चाहते हैं। हिंदी पाठकों की इस प्रवृत्ति से क्षुब्ध होकर माखनलाल जी ने कहा–

''मुफ्त में पढ़ने की पद्धति हिंदी से अधिक किसी भाषा में नहीं। रोटी, कपड़ा, शराब और शौक की चीजों का मूल्य तो वह देता है पर ज्ञान और ज्ञान प्रसाधन का मूल्य चुकाने को वह तैयार नहीं। हिंदी का सबसे बड़ा शत्रु यही है।'' (पत्रकारिता के युग निर्माता– माखनलाल चतुर्वेदी, शिवकुमार अवस्थी)

माखनलाल चतुर्वेदी पत्र–पत्रिकाओं की बढ़ती संख्या और गिरते स्तर से भी चिंतित थे। पत्र–पत्रिकाओं के गिरते स्तर के लिए उन्होंने पत्रों की कोई नीति और आदर्श न होने को कारण बताया। उन्होंने लिखा था–

''हिंदी भाषा का मासिक साहित्य एक बेढंगे और गए बीते जमाने की चाल चल रहा है। यहां बरसाती कीड़ों की तरह पत्र पैदा होते हैं। फिर यह आश्चर्य नहीं कि वे शीघ्र ही क्यों मर जाते हैं। यूरोप में हर एक पत्र अपनी एक निश्चित नीति रखता है। हिंदी वालों को इस मार्ग में नीति की गंध नहीं लगी। यहां वाले जी में आते ही, हमारे समान चार पन्ने निकाल बैठने वाले हुआ करते हैं। उनका न कोई आदर्श और उद्देश्य होता है, न दायित्व।'' (इतिहास–निर्माता पत्रकार, डा. अर्जुन तिवारी)

पत्रकारिता को किसी भी राष्ट्र या समाज का आईना माना गया है, जो उसकी समसामयिक परिस्थिति का निष्पक्ष विश्लेषण करता है। पत्रकारिता की उपादेयता और महत्ता के बारे में माखनलाल चतुर्वेदी जी ने कर्मवीर के संपादकीय में लिखा था–

''किसी भी देश या समाज की दशा का वर्तमान इतिहास जानना हो तो वहां के किसी सामयिक पत्र को उठाकर पढ़ लीजिए, वह आपसे स्पष्ट कर देगा। राष्ट्र के संगठन में पत्र जो कार्य करते हैं वह अन्य किसी उपकरण से होना कठिन है।'' (माखनलाल चतुर्वेदी, ऋषि जैमिनी बरूआ)

किसी भी समाचार पत्र की सफलता उसके संपादक और उसके सहयोगियों पर निर्भर करती है, जिसमें पाठकों का सहयोग प्रतिक्रिया की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। समाचारपत्रों की घटती लोकप्रियता के लिए माखनलाल जी ने संपादकों और पाठकों को जिम्मेदार ठहराते हुए लिखा था–

''इनके दोषी वे लोग ही नहीं हैं जो पत्र खरीदकर नहीं पढ़ते। अधिक अंशों में वे लोग भी हैं जो पत्र संपादित और प्रकाशित करते हैं। उनमें अपने लोकमत की आत्मा में पहुंचने का सामर्थ्य नहीं। वे अपनी परिस्थिति को इतनी गंदी और निकम्मी बनाए रखते हैं, जिससे उनके आदर करने वालों का समूह नहीं बढ़ता है।'' (पत्रकारिता के युग निर्माता– माखनलाल चतुर्वेदी, शिवकुमार अवस्थी)

भारतीय पत्रकारिता अपने प्रवर्तक काल से ही राष्ट्र और समाज चेतना के नैतिक उद्देश्य को लेकर ही यहां तक पहुंची है। वर्तमान समय में जब पत्रकार को पत्रकारिता के नैतिक कर्तव्यों से हटकर व्यावसायिक हितों के लिए कार्य करने में ही कैरियर दिखने लगा है। ऐसे समय में पत्रकारिता के प्रकाशपुंज माखनलाल चतुर्वेदी के आदर्शों से प्रेरणा ले अपने कर्तव्य पथ पर बढ़ने की आवश्यकता है। ■

मीडिया समाज हित से कट गया है– जवाहर लाल कौल

पत्रकारिता के बदलते स्वरूप और उसमें आई विसंगतियों के कारण आज पत्रकारिता एवं पत्रकारों पर कई तरह के लांछन लगाए जा रहे हैं। आज पत्रकारों एवं समाचार–पत्रों द्वारा व्यक्तिगत एवं संस्थागत लाभ के लिए सामाजिक एवं राष्ट्रीय हित के साथ–साथ सामुदायिक कल्याण की भावना के साथ भी खिलवाड़ किया जा रहा है। क्या ऐसे में पत्रकारिता को जनचेतना एवं परिवर्तन का औजार बनाने वाले क्रांतिकारी पत्रकारों द्वारा स्थापित परंपरा के प्रति न्याय हो रहा है? स्वाधीनता दिवस की 64वीं वर्षगांठ पर जाने माने पत्रकार जवाहर लाल कौल जी से इस विषय पर उनकी राय जानने का हम प्रयास कर रहे हैं।

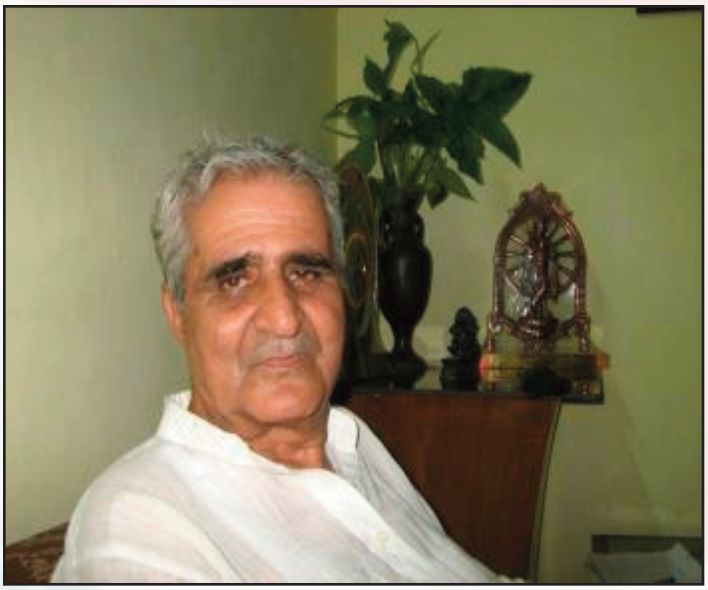

प्रश्न 1. 60 के दशक में पत्रकारिता में ऐसा क्या आकर्षण रहा जो आप इस क्षेत्र में आए? इस क्षेत्र में आपका कैसा अनुभव रहा?

उत्तर– पत्रकारिता में आने से पहले मैं सामाजिक संस्थाओं में काम करता था। इसलिए मुझे ऐसा लगा कि पत्रकारिता के माध्यम से मैं समाज के प्रति अपने सेवा भाव को पूरा कर सकता हूं। उस समय पत्रकारिता में जितना आज आकर्षण है, जैसे मनोरंजन, शान–ओ–शौकत और जो दूसरी चीजें दिखाई देती हैं, वह नहीं था। फिर भी उस समय यह आकर्षण था कि इसमें व्यक्ति अपने मन की बात दूसरों को सुना सकता है और सामाजिक दायित्व पूरा कर सकता है। इसीलिए मैं इस क्षेत्र में आया।

प्रश्न 2. पत्रकारिता के शुरूआती दौर से लेकर अब तक पत्रकारिता जगत में आप क्या बदलाव देखते हैं?

उत्तर– जब मैं पत्रकारिता में आया था तो पत्रकारिता में जो मिशन की भावना थी, समाज व उद्देश्य के प्रति काम करने की इच्छा थी वो कुछ–कुछ जीवित थी। पत्रकारिता में वे ही लोग आते थे जो समाज को कुछ देने की इच्छा रखते थे, कठिन परिस्थितियों में भी काम कर सकते थे। पारिवारिक जीवन की असुविधाओं को भी झेल सकते थे। तब तथ्य के साथ खिलवाड़ करना गलत माना जाता था। पत्रकारों का काम सच्चाई को सामने लाना और अपनी ओर से कम से कम प्रतिक्रिया देना होता है, लेकिन धीरे–धीरे पत्रकारिता में व्यापार का तत्व बढ़ने लगा। अखबारों का उत्पादन महंगा हो गया। इसका असर पत्रकारिता पर पड़ा। संचालक व मालिक मानने लगे कि समाचार पत्र उद्योग है और इसका काम पैसा कमाना है। पैसा कमाने के लिए लोगों को आकर्षित करना होता है जिसके चलते पत्रकारिता में एक शब्द आया 'इन्फोटेन्मेंट' या 'सूचनारंजन'। इसमें भी धीरे–धीरे सूचना तत्व कम होता गया और मनोरंजन का तत्व बढ़ता गया। इसीलिए सच्चाई और तथ्य पिछड़ते गए। सामान्य पत्रकार और संपादक भी तथ्यों के साथ खिलवाड़ करने की छूट पाने लगे। एक और महत्वपूर्ण बात इसी बीच हुई–टेलीविजन का प्रसार। किसी जमाने में अखबारी भाषा को दूसरे दर्जे की भाषा कहा जाता था। 'जर्नलिस्टिक लैंग्वेज' को हल्का–फुल्का माना जाता था जिसे टेलीविजन ने और हल्का कर दिया। भाषा तथ्यों पर आधारित न होकर अतिरंजना पर आधारित हो गई। पत्रकारिता ग्लैमर का व्यवसाय बन गई, ऐसे व्यवसाय में पैसे का लोभ होना स्वाभाविक है, इसीलिए पत्रकारिता समाजोन्मुख नहीं रह गई है।

प्रश्न 3. जम्मू–कश्मीर पर आपने गहन अध्ययन किया है। क्या आपको लगता है कि देश के अन्य भागों में रहने वाले नागरिकों को वहां की वास्तविक जानकारी समाचार पत्रों व चैनलों के माध्यम से हो पा रही है? अगर नहीं तो क्या और कैसे होना चाहिए?

उत्तर– मीडिया व्यापक समाज हित से कट गया है। बड़े अखबार केवल उन्हीं पाठकों तक पहुंचना चाहते है जो पाठक महंगे संसाधनों को खरीद सकते हैं और जिनके कारण बड़े–बड़े विज्ञापन प्राप्त हो सकते हैं। जिन्हें हम राष्ट्रीय समाचार पत्र कहते हैं उनमें इस बात की होड़ होती है कि वह अधिक से अधिक आर्थिक रूप से संपन्न शहरी खरीदारों को ही जुटाएं। स्पष्ट है कि समाचार देते वक्त या घटनाओं पर अपना मत व्यक्त करते समय ऐसे ही पाठकों या वर्गों का हित सर्वोपरि होता है। इस तरह समाचार देने से पूरे देश के संदर्भ में हो रही घटनाओं का सही–सही चित्रण संभव नहीं है। जम्मू–कश्मीर के सिलसिले में समाचार पत्रों में अधिकतर उन ही वर्गों और गुटों के बारे में समाचार आते हैं जो हिंसा का सहारा लेते हैं, जो नकारात्मक गतिविधियों में लिप्त हैं या जो चौंकाने वाले बयान देते हैं। इस तरह जो चित्र बनता है वो न तो पूरा होता है, न सच्चा। जम्मू–कश्मीर के बारे में मीडिया की भूमिका अक्सर उत्तरदायित्वपूर्ण नहीं रही है जिससे देश के अन्य क्षेत्रों के लोगों में अनेक तरह की भ्रांतियां पैदा हो गई हैं।

प्रश्न 4. जम्मू–कश्मीर की ऐसी क्या स्थिति है जो मीडिया द्वारा सामने नहीं लाई जा रही है?

उत्तर– जम्मू–कश्मीर में कई तरह के लोग रहते हैं। उत्तर–पश्चिमी पहाड़ों में लद्दाख का बहुत बड़ा क्षेत्र है जहां का प्रमुख धर्म, बौद्ध धर्म है। दक्षिण में जम्मू का विशाल क्षेत्र है। घाटी और जम्मू की पहाड़ियों में गुजर और बकरवाल रहते हैं। कश्मीर घाटी

में भी दो मुस्लिम संप्रदाय के लोग हैं–शिया और सुन्नी। इन सब में केवल सुन्नी संप्रदाय का एक वर्ग भारत विरोधी गतिविधियों में सक्रिय है और कुछ लोग हिंसक राजनीति कर रहे हैं। यानि पूरे राज्य की आबादी के 10 प्रतिशत लोगों की गतिविधियां ही मीडिया की रूचि का विषय है। शेष सभी वर्गों की आवाज अनसुनी कर दी जाती है।

प्रश्न 5. जम्मू–कश्मीर की स्थानीय मीडिया के बारे में आपकी क्या राय हैं?

उत्तर– जम्मू–कश्मीर की त्रासदी है कि कश्मीरी भाषा की कोई लिपि नहीं है। जो प्राचीन लिपि थी, वह 'शारदा' कहलाती थी। आजादी के बाद वहां के सत्ताधारियों ने उर्दू, फारसी पर आधारित एक लिपि का विकास किया लेकिन यह लिपि अवैधानिक होने के कारण नहीं चल पाई। परिणामतः प्राचीन और संपन्न होने के बावजूद कश्मीरी में लोकप्रिय पत्रकारिता पनप नहीं पा रही। वर्तमान समय में जितने भी समाचार पत्र वहां छप रहे हैं वह उर्दू या अंग्रेजी भाषा में हैं। इसीलिए आम लोगों तक पत्रकारिता नहीं पहुंच पा रही है।

प्रश्न 6. जम्मू–कश्मीर के समाचार पत्रों का क्या दृष्टिकोण हैं?

उत्तर– वहां भी पत्रकारिता का वही रूप है जो देश में है। अलग–अलग हितों के पत्र–पत्रिकाएं मौजूद हैं। कुछ अलगाववादियों का समर्थन करते हैं, तो कुछ राष्ट्रीय दृष्टिकोण को सामने लाते हैं। इनमें भी क्षेत्रीय विभिन्नता है। कश्मीर की पत्र–पत्रिकाएं अलगाववाद से प्रभावित है जबकि जम्मू में राष्ट्रीय पक्ष को प्रमुखता दी जाती है।

प्रश्न 7. वर्तमान विदेश नीति को आप किस प्रकार देखते हैं?

उत्तर– वर्तमान विदेश नीति में किसी सकारात्मक पहल का सर्वथा अभाव है। विदेश नीति किसी देश की सुरक्षा नीति का आयाम होती है, लेकिन दुर्भाग्य से इस समय भारत चारों ओर से ऐसे देशों से घिरा हुआ है जो शत्रुवत व्यवहार कर रहे हैं। बड़े देशों की बात तो अलग, नेपाल, बांग्लादेश जैसे छोटे देश भी भारत के हितों के विपरीत नीतियां अपना रहे हैं। यह हमारी विदेश नीति की असफलता का सबसे बड़ा प्रमाण है कि भारत अपने ही आंगन में अकेला पड़ गया है।

प्रश्न 8. पत्रकारिता और बाजार के बीच संबंधों पर आपने गहन अध्ययन किया है। आपकी राय में बाजार किस तरह पत्रकारिता को प्रभावित कर रहा है?

उत्तर– पत्रकारिता बाजार का ही हिस्सा है। जिस समय पत्रकारिता एक मिशन थी, उस समय पत्रकार एक सामाजिक कार्यकर्ता भी हुआ करता था। अब महंगी टेक्नोलॉजी और व्यापक प्रसार संख्या के कारण मीडिया पर पूंजीपतियों और व्यापारिक निगमों का वर्चस्व हो गया है। इसलिए आज के उपभोक्ता समाज में मीडिया बाजार पर न केवल आश्रित है बल्कि बाजार के हितों का संरक्षण करती है।

प्रश्न 9. प्रधानमंत्री मनामोहन सिंह ने मीडिया पर आरोप लगाया है कि ''मीडिया देश की समस्याओं को लेकर 'जज' की भूमिका अदा कर रहा है।'' क्या सरकार मीडिया पर नियंत्रण करने की कोशिश कर रही है?

उत्तर– सरकार को मीडिया पर नियंत्रण करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि सरकार जिस उपभोक्तावाद का स्वयं प्रसार कर रही हैं उसी उपभोक्तावाद का माध्यम देश के अखबार भी है। सरकार इस बात को समझती है कि मीडिया को परोक्ष रूप से प्रभावित करना आसान है लेकिन प्रत्यक्ष नियंत्रण सरकार के लिए भी खतरनाक हो सकता है।

प्रश्न 10. व्यवस्था परिवर्तन को लेकर देशभर में चल रही बहस पर मीडिया के नजरिए को आप किस परिप्रेक्ष्य में देखते हैं?

उत्तर– व्यवस्था परिवर्तन मीडिया के लिए एक खबर है। वर्तमान व्यवस्था को बदलने की न तो मीडिया में इच्छा है और न ही क्षमता।

प्रश्न 11. 'न्यूज ऑफ द वर्ल्ड' साप्ताहिक पत्र के बंद होने की घटना को मूल्य आधारित पत्रकारिता की समाप्ति की घोषणा मान सकते है?

उत्तर– ऐसी सारी पत्रिकाओं के बंद होन से ये तो पता लगता ही है कि मुनाफे के इस व्यापार में केवल सामाजिक दायित्व का काम करना कितना कठिन हो गया है।

प्रश्न 12. आपके विचार में भारत की भावी दिशा क्या होनी चाहिए और यह कैसे संभव है?

उत्तर– जब 1947 में हमारा देश आजाद हुआ तो हमने अपनी दिशा तय नहीं की क्योंकि हमने ऐसी व्यवस्था अपना ली जो पहले से बनी हुई थी। हम लगभग उसी दिशा में चल रहे थे जिसमें आजादी से पहले चलते थे। इसीलिए अगर देश को बदलना है तो यह मानकर चलना होगा कि जिस तरह की व्यवस्था अपनानी है वह यहीं की परिस्थितियों, यहीं की मनीषा और यहीं के सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित हो सकती हैं। दिशाएं स्वयं बनाई जाती हैं, आयातित नहीं होती। ■

वैचारिक क्रांति के अग्रदूत : महर्षि अरविंद

महर्षि अरविंद महान योगी, क्रान्तिकारी, राष्ट्रवाद के अग्रदूत, प्रखर वक्ता एवं पत्रकार के रूप में जाने जाते हैं। महर्षि अरविंद की पत्रकारिता के बारे में देशवासियों को बहुत अधिक जानकारी नहीं रही है, जिसके बारे में जानना नवोदित पत्रकार पीढ़ी के लिए आवश्यक है। महर्षि अरविंद उन पत्रकारों में से एक थे, जिन्होंने समाचार पत्रों के माध्यम से तत्कालीन जनमानस को स्वाधीनता संग्राम के लिए तैयार करने में प्रमुख भूमिका निभाई थी। उनका जन्म 15 अगस्त, 1872 में कलकत्ता के एक बंगाली परिवार में हुआ था। उनके पिता कृष्णधन घोष कलकत्ता के ख्याति प्राप्त वकील थे, जो पूरी तरह से पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव में थे। महर्षि अरविंद की माता का नाम स्वर्णलता देवी था, पिता के दबाव में माता को भी पश्चिम की सभ्यता के अनुसार ही रहना पड़ता था।

महर्षि अरविंद की शिक्षा–दीक्षा भी अंग्रेजी वातावरण में ही हुई थी। उनके पिता ने उन्हें पांच वर्ष की अवस्था में दार्जिलिंग के लोरेटो कॉन्वेंट स्कूल में दाखिल करवा दिया, जिसका प्रबंध यूरोपीय लोग करते थे। अरविंद अपने बाल्यकाल के सात वर्षों तक ही भारत में रहे, जिसके पश्चात उनके पिताजी ने उन्हें उनके भाइयों के साथ इंग्लैण्ड भेज दिया जहां मैनचेस्टर के एक अंग्रेज परिवार में उनका पालन–पोषण हुआ।

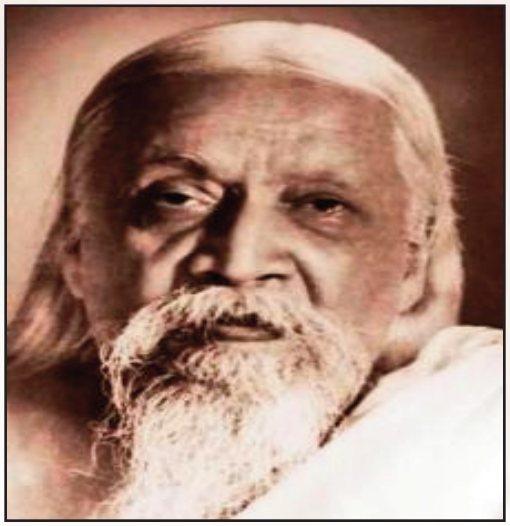

महर्षि अरविंद ने ब्रिटेन में अपनी शिक्षा सैंट पॉल स्कूल और कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के किंग्स कॉलेज में प्राप्त की। पश्चिमी सभ्यता में पले–बढ़े महर्षि अरविंद एक दिन भारतीय संस्कृति के व्याख्याता होंगे, ऐसा शायद किसी ने सोचा भी नहीं होगा। फरवरी 1893 में महर्षि अरविंद भारत लौटे, ब्रिटेन से लौटने के पश्चात उन्होंने बड़ौदा कॉलेज में अध्यापन कार्य किया। यही वह समय था, जब बंगाल विभाजन के परिणामस्वरूप देश में 1857 के पश्चात क्रांति की ज्वाला एक बार फिर से प्रखर हो रही थी, जिसका केन्द्र कलकत्ता ही था। महर्षि अरविंद बड़ौदा से कलकत्ता भी आते–जाते रहते थे जहां वे क्रांतिकारी गतिविधियों में सहयोग करने लगे।

सन 1907 में अरविंद ने कांग्रेस के क्रांतिकारी संगठन नेशनलिस्ट पार्टी के राष्ट्रीय अधिवेशन की अध्यक्षता की। इसी वर्ष अरविंद घोष ने विपिनचंद्र पाल के अंग्रेजी दैनिक 'वन्दे मातरम' में काम करना शुरू कर दिया। महर्षि अरविंद का पत्रकारिता के क्षेत्र में इससे पूर्व ही पदार्पण हो चुका था। उन्होंने पत्रकारिता की शुरूआत सन 1893 में मराठी साप्ताहिक 'इन्दु प्रकाश' से की थी जिसमें उनके नौ लेख प्रकाशित हुए थे। इनमें शुरूआती दो लेख उन्होंने 'भारत और ब्रिटिश संसद' शीर्षक के साथ लिखे थे। इसके बाद 16 जुलाई से 27 अगस्त, 1894 के दौरान उनकी सात लेखों की एक श्रृंखला प्रकाशित हुई थी। वे लेख उन्होंने 'वन्दे मातरम' के रचयिता एवं बांग्ला के महान साहित्यकार बंकिम चंद्र चटर्जी को श्रद्धांजलि देते हुए लिखे थे। इसके बाद अरविंद की लेखन प्रतिभा के दर्शन बंगाली दैनिक 'युगांतर' में हुए जिसकी शुरूआत मार्च, 1906 में उनके भाई बरिन्द्र और अन्य साथियों ने की। इस पत्र के प्रकाशन पर मई, 1908 में ब्रिटिश सरकार ने प्रतिबंध लगा दिया।

इसके बाद महर्षि अरविंद ने अंग्रेजी दैनिक 'वन्दे मातरम' में कार्य किया। इस पत्र में प्रकाशित उनके लेखों ने क्रांति के ज्वार में एक नया तूफान ला दिया। 'वन्दे मातरम' में उनके लेखों के बारे में कहा जाता है कि भारतीय पत्रकारिता के इतिहास में इतने प्रखर राष्ट्रवादी लेख कभी नहीं लिखे गए। ब्रिटिश सरकार की नीतियों के विरोध में लिखने पर 'वन्दे मातरम' पर राजद्रोह का मुकदमा दायर कर दिया गया। अरविंद को संपादक के रूप में अभियुक्त बनाया गया। इस अवसर पर विपिन चंद्र पाल ने उनका बहुत सहयोग किया। उन्होंने अरविंद को पत्र का संपादक मानने से ही इंकार कर दिया जिसके लिए उन्हें छह माह का कारावास भुगतना पड़ा, परंतु सरकार अरविंद को दोषी नहीं सिद्ध कर पाई। अदालत के द्वारा अरविंद को दोषमुक्त करार दिए जाने पर देशभर में जश्न मनाया गया एवं स्थान–स्थान पर संगोष्ठियां आयोजित हुईं। उनके पक्ष में संपादकीय लिखे गए तथा उन्हें सम्मानित किया गया। अरविंद की पत्रकारिता की लोकप्रियता का ही कारण था कि कलकत्ता के लालबाजार की पुलिस अदालत के बाहर हजारों युवा एकत्र होकर 'वन्दे मातरम' के नारे लगाते थे जहां अरविंद के मामले की सुनवाई चल रही थी। सितंबर 1908 में 'वन्दे मातरम' का प्रकाशन बंद हो गया। इसके बाद उन्होंने 15 जून, 1909 को कलकत्ता से ही अंग्रेजी साप्ताहिक 'कर्मयोगी' और 23 अगस्त, 1909 को बंगाली साप्ताहिक 'धर्म' की शुरूआत की, जिनका मूल स्वर राष्ट्रवाद ही था। महर्षि अरविंद ने इन दोनों पत्रों में राष्ट्रवाद के अलावा सामाजिक समस्याओं पर भी लिखा। उनके इन पत्रों से विचलित होकर तत्कालीन वायसराय के सचिव ने लिखा था– ''सारी क्रांतिकारी हलचल का दिल और दिमाग यही व्यक्ति है, जो ऊपर से कोई गैर कानूनी कार्य नहीं करता और किसी तरह कानून की पकड़ में नहीं आता।''

महर्षि अरविंद का लेखन उनके अंतिम समय तक अनवरत चलता रहा। सन 1910 में वे 'कर्मयोगी' और 'धर्म' को भगिनी निवेदिता को सौंप कर चन्द्रनगर चले गए। इसके बाद वे अन्तः प्रेरणा से पांडिचेरी पहुंचे। वहां भी उन्होंने 'आर्य' अंग्रेजी मासिक पत्रिका की शुरूआत की जिसमें उन्होंने प्रमुख रूप से धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों पर लिखा। 'आर्य' में उनकी अमर रचनाएं प्रकाशित हुईं, जिनमें प्रमुख हैं 'लाइफ डिवाइन', 'सीक्रेट ऑफ योग' एवं गीता पर उनके निबंध। महर्षि अरविंद का भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय की पत्रकारिता में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 5 दिसंबर 1950 को महर्षि अरविंद देह त्याग कर अनंत में विलीन हो गए। पत्रकारिता में राष्ट्रवादी स्वर को स्थान देने वालों में अरविंद का नाम सदैव उल्लेखनीय रहेगा। ■

मिशन से प्रोफेशन तक का सफर

आजादी से पहले पत्रकारिता मिशन के रूप में थी। गणेश शंकर विद्यार्थी, बाबू राव विष्णु पराड़कर, महात्मा गांधी, जुगल किशोर जैसे पत्रकारों ने अंग्रेजों की यातनाएं सहने के बावजूद भी अपने कलम की धार को पैना बनाए रखा और देश की आजादी में अपना सम्पूर्ण योगदान दिया। आजादी के बाद पत्रकारिता का व्यावसायीकरण होने के आरोप लगते रहे हैं। कहा जाता है कि आज पत्रकारिता मिशन न होकर केवल अपने निजी हितों की पूर्ति कर रहा है। आधुनिक भारतीय पत्रकारिता ने स्वतंत्रता संघर्ष की विरासत से स्वयं को 'डी लिंक' कर लिया है। आप इससे कहां तक सहमत हैं?

मेरे विचारों में आज की पत्रकारिता निश्चित रूप से व्यवसायीकरण के झूले में झूल रही है। पत्रकारिता को जिन लोगों ने उज्ज्वल बनाया वे समझौतावादी नहीं थे। उस दौर के हमारे सामने गणेश शंकर विद्यार्थी, बाबू राव विष्णु पराड़कर, लाला लाजपत राय आदि उदाहरण हैं, जो पत्रकारिता समाज सेवा के लिए किया करते थे। उस दौर के उदाहरण तो हमें याद हैं लेकिन आज के दौर में हम ऐसे कितने ईमानदार लोगों के नाम गिना सकते हैं, शायद इक्का या दुक्का ही ऐसे लोग होंगे जो इस देश के समाज के उत्थान में कलम के सच्चे सिपाही हैं। खबर की कीमत आज के आधुनिक पत्रकार जान पा रहे हैं कि जिस खबर से पैसा न निकले वे खबर नही है। खबर से पैसा कितना निकल सकता है सभी समाचार उद्योग ये ही देखते हैं।

अरूण कुमार (लेगेसी इंडिया)

ये बात सही है कि आज पत्रकारिता व्यावसायिक है। पहले लोगों का जीवन खेती पर निर्भर था। आज औद्योगिकीकरण का दौर है। लोग शहर में नौकरी की तलाश में आते हैं। ऐसे में उनके पास आजीविका का साधन केवल नौकरी ही होती है और यदि वे किसी मिशन के लिये अपना जीवन दांव पार लगा भी दे तो क्या वो संस्था उसके परिवार की जिम्मेदारी लेगी? ये वही भारत है, जहां सीमा पर शहीद हुये जवानों की विधवा मुआवजे के लिये आजीवन सरकारी दफ्तरों के चक्कर लगाती रहती है।

रिचा वर्मा (आकाशवाणी)

अंग्रेजों की यातनाएं सहने के बावजूद भी गणेश शंकर विद्यार्थी, बाबू राव विष्णु पराड़कर, महात्मा गांधी, जुगल किशोर जैसे पत्रकारों ने अपने कलम की धार को पैना बनाए रखा, बिल्कुल सही। सवाल यह है कि ये बड़े नाम किसके लिए लिख रहे थे, स्वयं के लिए, लोक–हित के लिए। हम व्यवसाय के लिए लिख रहे हैं। हमारे कलम की स्याही मीडिया मालिक खरीदता है, इसलिए उसकी धार भी वही तय करता है। पत्रकारिता के मिशन की बजाय राहुल के यूपी मिशन पर ध्यान दें, तरक्की जल्दी होगी। वरना पैर में हवाई चप्पल और कंधे पर झोले के सिवाय पत्रकारिता हमें कुछ नहीं दे सकती। हां, अगर व्यवस्था से लड़ने का इतना ही जूनून है तो पत्रकारों को पहले खुद की लड़ाई लड़नी होगी। 10–20 हजार में खुश होकर मालिक के अहसानों के तले दबने के बजाय मीडिया में ही काम करने वाले आईटी, मैनेजमेंट कर्मियों के समान वेतन की लड़ाई लड़नी होगी। जो खुद की लड़ाई नहीं लड़ सकता, वह पत्रकारिता की लड़ाई क्या खाक लड़ेगा?

चंदन कुमार (उप–संपादक, जागरण जोश.कॉम)

ये सही है कि आजादी से पूर्व पत्रकारिता एक मिशन के रूप में थी और आज पत्रकारिता मिशन न होकर केवल अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति भर रह गयी है। मैं इसे थोड़ा अलग नजरिए से भी देखता हूं, पहले भले ही पत्रकारों के विचार अलग–अलग रहें हों मगर सभी का मकसद एक था, सिर्फ और सिर्फ आजादी। आज भी वैचारिक तौर पर पत्रकारों में भिन्नता तो दिखती है मगर साथ ही एक मकसद विहीन पत्रकारिता की अंधी दौड़ में भी वो शामिल दिखाई देते हैं, जो पहले नहीं था। ऐसे में पत्रकारिता के भी मायने बदले हैं, काम का तरीका बदला है, स्वरूप बदला है।

अनूप आकाश वर्मा (पंचायत संदेश, संपादक)

आज की पत्रकारिता मिशन से हटकर केवल प्रोफेशन बन गयी है! किसी भी मीडियाकर्मी को इस बात से कोई सरोकार नहीं है कि उसके द्वारा बनायी गयी न्यूज का क्या प्रभाव पड़ता है और उसका क्या औचित्य है? मतलब सिर्फ इस बात से है कि उसे उस खबर के बदले रकम मिलती है या नहीं। वो रकम जिसके जरिये वो अपना और अपने परिवार को सुख सुविधाएं दिला सके। ऐसे में किसी पर आरोप लगाना कि वह कर्म के बजाये अर्थ को महत्व देने लगा है सही नहीं होगा क्योंकि कहीं न कहीं उसने समाज के बदलते परिवेश के साथ समझौता कर लिया है और ये कहना कि समाज की दिशा गलत है, ठीक नहीं!

आकाश राय (हिन्दुस्थान समाचार)

आजादी के पहले पत्रकारिता मिशन थी लेकिन धीरे धीरे जब समाज का विकास हुआ तो पत्रकारिता का भी विकास हुआ। सभी अखबार और चैनल टीआरपी की होड़ में जुट गए। इसके लिए उन्हें अपने जमींर से समझौता करते हुए पूंजी की ओर झुकना पड़ा, इसीलिए पैसा कमाने के चक्कर में पत्रकारिता का धीरे धीरे व्यावसायीकरण होने लगा। आज पत्रकारिता भी पैसा कमाने और रोजी रोटी चलाने का जरिया बन गई है।

आशीष सिंह (पीटीसी न्यूज)

पत्रकारिता आज एक व्यवसाय है ये बात एक दम साफ है इसमें कोई दो राय नहीं हैं। रामदेव और अन्ना के मामले में मीडिया की भूमिका सबके सामने है। अपनी स्वतंत्रता का रोना रोने वाली मीडिया ने सरकार का बचाव कुछ ऐसे किया कि कोई अंधा और विवेकहीन भी समझ जाये की मीडिया कितनी स्वतंत्र है। उसके बाद एक के बाद एक कई घटनाएं चाहे मुंबई ब्लास्ट के बाद राहुल वाणी, कश्मीर में तिरंगा या फिर दिग्गी राजा की हर बात पर संघ को बदनाम करने की नाकाम कोशिश, मीडिया ने इन सबको खूब जोर शोर से छापा और अपना मिशन दिखाया। सभी लोग भ्रष्टाचारी हैं या बेईमान हैं ऐसा कहना गलत है लेकिन हर बार बेईमानी को मजबूरी बता देना किसी भी लिहाज से ठीक नहीं है।

विकास शर्मा (आज समाज) ■

विषय– दिल्ली की साहित्यिक पत्र–पत्रिकाएं : स्वाधीनता के बाद

शोधार्थी– डॉ. अवधेश कुमार, दिल्ली विश्वविद्यालय, पीएचडी (सन्–2000)

साहित्य और पत्रकारिता दोनों ही समाज के संवेदनशील सदस्य होने के नाते इसके प्रतिरूप को बिम्बित करने का प्रयास करते हैं। वस्तुतः दोनों ही समाज के दर्पण है–अन्तर है तो केवल शैली का। पत्रकार और साहित्यकार दोनों ही समाज के महत्वपूर्ण प्रश्नों एवं विषयों पर अपनी लेखनी चलाते हैं। इस दृष्टि से साहित्य तथा पत्रकारिता दोनों एक–दूसरे के सहयोगी अथवा पूरक माने जा सकते हैं। पत्रकारिता का एक महत्वपूर्ण कार्य तथ्यों एवं विचारों को प्रकाशित करना है और साहित्य का भावों तथा विचारों को अभिव्यक्ति देना। साहित्य को विस्तार देने का कार्य भी पत्रकारिता द्वारा किया जाता है और साहित्यिक पत्रकारिता, पत्रकारिता का ही एक रूप है।

साहित्यिक पत्रकारिता की शुरूआत भारत में 19वीं सदी में हो चुकी थी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को साहित्यिक पत्रकारिता का प्रवर्तक माना जाता है। उन्होंने वर्ष 1868 में साहित्यिक पत्रिका 'कवि वचन सुधा' का प्रकाशन किया। भारतेन्दु जी के जन्मस्थल बनारस से उस समय छः पत्रिकाएं प्रकाशित होती थी– कविवचन सुधा, हरिश्चन्द्र–मैगजीन, बालबोधिनी, काशी समाचार व आर्यमित्र।

द्विवेदी युग (1900–1918ई.) में कई साहित्यिक पत्रिकाएं प्रकाशित हुई। वर्ष 1900 में इलाहबाद से मासिक पत्रिका सरस्वती का प्रकाशन शुरू हुआ। वर्ष 1903 में महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के संपादन में इस पत्रिका ने नई ऊंचाइयों को छुआ। साहित्य के क्षेत्र में द्विवेदी जी ने व्याकरण एवं खड़ी बोली को एक नई दिशा प्रदान की। इस समय की अन्य पत्रिकाएं सुदर्शन, देवनागर, मनोरंजन, इन्दु, समालोचक आदि थी।

छायावाद काल में चांद, माधुरी, प्रभा, साहित्य संदेश, विशाल भारत, सुधा, कल्याण, हंस, आदर्श, मौजी, समन्वय, सरोज आदि साहित्यिक पत्रिकाएं सामने आई। वर्तमान में सारिका, संचेतना निहारिका, वीणा, प्रगतिशील समाज, युगदाह, कथासागर, सन्देश, आलोचना, सरस्वती संवाद, नया ज्ञानोदय, हंस आदि साहित्यिक पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं।

हिन्दी की साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में डॉ. अवधेश कुमार द्वारा 'दिल्ली की साहित्यिक पत्र–पत्रिकाएं : स्वाधीनता के बाद' विषय पर वर्ष 2000 में शोध प्रस्तुत किया गया है। स्वाधीनता के पश्चात दिल्ली से आजकल, अनुवाद, अकविता, आलोचना, इन्द्रप्रस्थ भारती, समकालीन भारतीय साहित्य, गगलाचल, कृति, भाषा, साहित्य अमृत, नटरंग, संचेतना, नंदन, बाल भारती, सार–संसार, साप्ताहिक हिन्दोस्थान, हंस, कथादेश, पश्यंती, नया प्रतीक, समीक्षा आदि साहित्यिक पत्रिकाएं प्रकाशित हो रहीं हैं, जिनका संक्षिप्त परिचय शोध में दिया है। शोध में उन्होंने दिल्ली से प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं को संकलित करके हिन्दी की साहित्यिक पत्रकारिता का इतिहास लिखने का विनम्र प्रयास किया है और इन पत्रिकाओं का मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। इसके साथ ही लेखक ने पत्रकारिता के विभिन्न पक्षों तथा तत्वों का भी अध्ययन–विश्लेषण शोध में करने का प्रयास किया है जो अब पुस्तक के रूप में बाजार में उपलब्ध है। साहित्य के क्षेत्र में उनके द्वारा किया गया यह कार्य बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत में साहित्यिक पत्रकारिता के लेखन की आवश्यकता है।

पत्रकारिता की विधा को साहित्य का ही अंग माना जाता है, जिसके माध्यम से हमें तात्कालिक तौर पर साहित्य उपलब्ध होता है। पत्रकारिता और साहित्य का सम्मिश्रण होने पर पत्रकारिता जनसूचना ही नहीं जनशिक्षण के उद्देश्य को भी पूर्ण कर पाती है। साहित्यिक पत्रिकाओं ने भारत के राष्ट्रीय पुनर्जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, यह क्रम आजादी के पश्चात 90 के दशक तक अनवरत चलता रहा। सन् 1991 में उदारीकरण की नीतियों के लागू होने के पश्चात साहित्यिक पत्रिकाएं बाजारीकरण की दौर में पिछड़ती चली गईं। साहित्यिक पत्रिकाओं का स्थान अब उन पत्रिकाओं ने ले लिया है, जो किसी विषय पर आधारित होती हैं। इनमें प्रमुख हैं आर्थिक और राजनीतिक पत्रिकाएं। यह पत्रिकाएं बाजारीकरण की दृष्टि से ही कार्य करती हैं, लेकिन समाज का वैचारिक पोषण नहीं कर पाती। भारत में साहित्यिक पत्रिकाओं ने हिन्दी भाषा और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं को नई ऊंचाईयां प्रदान की है। वर्तमान समय में जब पत्रकारिता अपने नैतिक मूल्यों और उद्देश्यों से अलग हट रही है, ऐसे में साहित्यिक पत्रिकाओं की आवश्यकता जान पड़ती है। ■

पूंजी प्रवाह के आगे नतमस्तक 'पत्रकारिता'

आकाश राय

लोकतंत्र में पत्रकारिता ही एक ऐसा पेशा है जिसे सामाजिक सरोकारों का सच्चा पहरूआ कह सकते हैं क्योंकि पत्रकारिता का लक्ष्य सच का अन्वेषण है। सामाजिक शुचिता के लिए सच का अन्वेषण जरूरी है। सच भी ऐसा कि जो समाज में बेहतरी की बयार को निर्विरोध बहाये, जिसके तले हर मनुष्य खुद को संतुष्ट समझे। पत्रकारिता का उद्भव ही मदांध व्यवस्था पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से हुआ था लेकिन आज की वर्तमान स्थिति में यह बातें बेमानी ही नजर आ रहीं हैं। खुद को आगे पहुंचाने और लोगों की भीड़ से अलग दिखने की चाह में जो भी अनर्गल चीज छापी या परोसी जा सकती हैं, सभी किया जा रहा है। अगर आज की पत्रकारिता को मिशन का चश्मा उतार कर देखा जाये तो स्पष्ट होता है कि मीडिया समाचारों के स्थान पर सस्ती लोकप्रियता के लिए चटपटी खबरों को प्राथमिकता दे रही है।

एक दौर हुआ करता था जब पत्रकारिता को निष्पक्ष एवं पत्रकारों को श्रद्धा के रूप में देखा जाता था। जो समाज के बेसहाराओं का सहारा बन उनकी आवाज को कुम्भकर्णी नींद में सोए हुक्मरानों तक पहुंचाने का माद्दा रखती थी। उस दौर के पत्रकार की कल्पना दीन–ईमान के ताकत पर सत्तामद में चूर प्रतिष्ठानों की चूलें हिलाने वाले क्रांतिकारी फकीर के रूप में होती थी। यह बात अब बीते दौर की कहानी बन कर रह गयी है। आज की पत्रकारिता के सरोकार बदल गये हैं और वह भौतिकवादी समाज में चेरी की भूमिका में तब्दील हो गयी है। जिसका काम लोगों के स्वाद को और मजेदार बनाते हुए उनके मन को तरावट पहुंचाना है। देश के सामाजिक चरित्र के अर्थ प्रधान होने का प्रभाव मीडिया पर भी पड़ा है और आज मीडिया उसी अर्थ लोलुपता की ओर अग्रसर है, या यूं कहिए की द्रुत गति से भाग रही है। इस दौड़ में पत्रकारिता ने अपने चरित्र को इस कदर बदला है कि अब समझ ही नहीं आता कि मीडिया सच की खबरें बनाती है या फिर खबरों में सच का छलावा करती है, लेकिन जो भी हो यह किसी भी दशा में निष्पक्ष पत्रकारिता नहीं है।

पत्रकारिता का मूल उद्देश्य है सूचना, ज्ञान और मनोरंजन प्रदान करना। किसी समाचार पत्र को जीवित रखने के लिए उसमें प्राण होना आवश्यक है। पत्र का प्राण होता है समाचार, लेकिन बढ़ते बाजारवाद और आपसी प्रतिस्पर्द्धा के कारण विज्ञापन इतना महत्वपूर्ण हो गया है कि पत्रकारिता का वास्तविक स्वरूप ही बदल गया है। राष्ट्रीय स्तर के समाचारों के लिए सुरक्षित पत्रों के प्रथम पृष्ठ पर भी अर्द्धनग्न चित्र विज्ञापनों के साथ प्रमुखता से प्रकाशित हो रहे हैं। समाचार पत्रों का सम्पादकीय जो समाज के बौद्धिक वर्ग को उद्वेलित करता था, जिनसे जनमानस भी प्रभावित होता था, उसका प्रयोग आज अपने प्रतिद्वन्द्वी को नीचा दिखाने के लिए किया जा रहा है। इससे पत्रकारिता के गिरते स्तर और उसकी दिशा को लेकर अनेक सवाल खड़े हो गये हैं। फिल्म अभिनेत्रियों की शादी और रोमांस के सम्मुख आम महिलाओं की मौलिक समस्याएं, उनके रोजगार, स्वास्थ्य उनके ऊपर होने वाले अत्याचारों से संबंधित समाचार स्पष्ट रूप से नहीं आ पा रहें हैं। यदि होता भी है तो बेमन, केवल दिखाने के लिए।

पत्रकारिता के इतिहास पर नजर डाले तो समझ आता है कि भारत में पत्रकारिता अमीरों के मनोरंजन के साधन के रूप में विकसित होने की बजाय स्वतंत्रता संग्राम के एक साधन के रूप में विकसित हुई थी। इसलिए जब सन् 1920 के दशक में यूरोप में पत्रकारिता की सामाजिक भूमिका पर बहस शुरू हो रही थी, भारतीय पत्रकारिता ने प्रौढ़ता प्राप्त की। सन् 1827 में राजा राममोहन राय ने पत्रकारिता के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लिखा था– 'मेरा उद्देश्य मात्र इतना है कि जनता के सामने ऐसे बौद्धिक निबंध उपस्थित करूं जो उनके अनुभव को बढ़ाएं और सामाजिक प्रगति में सहायक सिद्ध हो। मैं अपने शक्तिशाली शासकों को उनकी प्रजा की परिस्थितियों का सही परिचय देना चाहता हूं और प्रजा को उनके शासकों द्वारा स्थापित विधि व्यवस्था से परिचित कराना चाहता हूं ताकि जनता को शासन अधिकाधिक सुविधा दे सके। जनता उन उपायों से अवगत हो सके जिनके द्वारा शासकों से सुरक्षा पाई जा सके और अपनी उचित मांगें पूरी कराई जा सके।' वर्तमान में राजा राममोहन राय की यह बातें केवल शब्द मात्र हैं जिन पर चलने में किसी भी पत्रकार की कोई रूचि नहीं है। आखिर उसे भी समाज में अपनी ऊंचाईयों को छूना है। आज के समय में मीडिया अर्थात् पत्रकारिता से जुड़े लोगों का लक्ष्य सामाजिक सरोकार न होकर आर्थिक सरोकार हो गया है। वैसे भी व्यवसायिक दौर में सामाजिक सरोकार की बातें अपने आप में ही बेमानी हैं। सरोकार के नाम पर अगर कहीं किसी कोने में पत्रकारिता के अंतर्गत कुछ हो भी रहा है तो वो भी केवल पत्रकारिता के पेशे की रस्म अदायगी भर है।

पत्रकारिता के पतित पावनी कार्यनिष्ठा से सत्य, सरोकार और निष्पक्षता के विलुप्त होने के पीछे वैश्वीकरण की भूमिका भी कम नहीं है। सभी समाचार–पत्र अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय समाचारों के बीच झूलने लगे हैं। विदेशी पत्रकारिता की नकल पर आज अधिकांश पत्र सनसनी तथा उत्तेजना पैदा करने वाले समाचारों को सचित्र छापने की दौड़ में जुटे हैं। इन्टरनेट से संकलित समाचार कच्चे माल के रूप में जहां इन्हें सहजता से उपलब्ध हो रहे हैं, वहीं प्रौद्योगिकी का उपयोग कर अपने पत्रों को क्षेत्रीय रूप दे रहे हैं, जिसके कारण पत्रकारिता का सार्वभौमिक स्वर ही विलीन होने लगा है। ऐसी पत्र–पत्रिकाएं व टेलीविजन चैनल जो 'गे डे' यानी कि समलैंगिकता दिवस मनाते हैं, संस्कृति की रक्षा की बातों को 'मोरल पोलिसिंग' कहकर बदनाम करने की कोशिशें करते हैं, भारतीय परंपराओं और जीवन मूल्यों का मजाक उड़ाते हैं, खुलकर अश्लीलता, वासनायुक्त

जीवन और अमर्यादित आचरणों का समर्थन करते हैं और कहते हैं कि यह सब वे 'पब्लिक डिमांड' यानी कि जनता की मांग पर कर रहे हैं। परन्तु वास्तविकता यही है कि बाजारवाद से लाभान्वित होने के प्रयास में दूसरों पर दोषारोपण करके स्वयं को मुक्त नहीं किया जा सकता।

आज यदि महात्मा गांधी, राजा राममोहन राय, बाबू राव विष्णु पराड़कर या माखनलाल चतुर्वेदी जीवित होते तो क्या वे इसे सहन कर पाते? क्या उन जैसे पत्रकारों की विरासत को आज के पत्रकार ठीक से स्मरण भी कर पा रहे हैं? क्या आज के पत्रकारों में उनकी उस समृद्ध विरासत को संभालने की क्षमता है? ये प्रश्न ऐसे हैं जिनके उत्तर आज की भारतीय पत्रकारिता को तलाशने की जरूरत है, अन्यथा न तो वह पत्रकारिता ही रह जाएगी और न ही उसमें भारतीय कहलाने लायक कुछ होगा। इसके अलावा पत्रकारिता के लिए बड़ा खतरा गलत दिशा में बढ़ा कदम है, जिसके लिए बाजारवादी आकर्षण से मुक्त होकर पुनः स्थापित परंपरा का अनुसरण करना ही होगा, तभी पत्रकारिता की विश्वसनीयता बढ़ेगी। मीडिया संस्थानों और पत्रकारों को पीत पत्रकारिता एवं सत्ताभोगी नेताओं के प्रशस्ति गान के बजाय जनमानस के दुःख दर्दों का निवारण, समाज एवं राष्ट्र के उन्नयन के लिए निःस्वार्थ भाव से कर्तव्य–पालन करना होगा, तभी वह लोकतंत्र में चौथे स्तंभ का अस्तित्व बनाये रखने में सफल हो सकेंगे। ■

शुभकामना संदेश

These are well thought and meticulously planned matters, provokes for thinking and leading towards glorious ideals of journalism.
Thanks
-Awadhesh Kumar (Senior Journalist)

अच्छा प्रयास है। मेरी तरफ से शुभकामनाएं
–वर्तिका नंदा (वरिष्ठ पत्रकार)

बेहतरीन संयोजन, पत्रकारिता को लेकर संपादक मंडल सहित सभी यूनिट बधाई के पात्र है। संवादसेतु पढ़कर लगा कि पत्रकारों के बारे में भी कोई सोचने वाला है। सभी लेख दिल को छूने वाले हैं।
–सुनील शर्मा (समाचार हेड, दैनिक जागरण, सीहोर कार्यालय)

पत्रकारिता के क्षेत्र में एक अच्छी पहल हेतु आप सभी को मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएं। इसे निरंतर जारी रखें।
–राजकमल राय (दैनिक जागरण)

'संवादसेतु' की पहल पर आप सभी को शुभकामनाएं। आप लोगों द्वारा लिया गया मिशन पूरा हो, मेरी प्रभु से प्रार्थना है।
–मनोज त्यागी (पत्रकार)

बहुत–बहुत शुभकामनाएं...
सम्पूर्ण पत्रिका को देखने–पढ़ने पर ज्ञात हुआ कि ''संवादसेतु'' मीडिया जगत में एक ज्ञानवर्धक पत्रिका के रूप में अपना असर छोड़ेगी। पुनः बधाई।
–अनूप आकाश वर्मा (पंचायत संदेश)

आप सभी द्वारा दिए गए सहयोग हेतु आप सभी का आभार व्यक्त करते हैं और यह आशा करते हैं कि इसी प्रकार आपका सहयोग हमेशा मिलता रहेगा। कृपया इसी प्रकार हमारा मार्गदर्शन एवं उत्साहवर्धन करते रहें। कृपया अपने सुझाव mail@samvadsetu.com पर प्रेषित करें।

धन्यवाद

मीडिया–शब्दावली

1. एडिटोरियलाइज– किसी समाचार या शीर्षक के विषय में मत प्रकट करना। इसका अधिकार केवल सम्पादक या सहकारी सम्पादक को होता है।

2. एंबर्गो– समाचार पत्रों को कभी–कभी समाचार पहले ही दे दिया जाता है, किन्तु इसके साथ ही यह अनुरोध भी कर दिया जाता है कि उस समाचार का प्रकाशन एक निश्चित तिथि और समय से पूर्व नहीं किया जाए। यह अनुरोध ही एंबर्गो कहलाता है।

3. एक्सक्लूसिव– पत्रकारिता–जगत में इसका आशय ऐसे समाचारों और सूचनाओं से है, जो अन्य किसी समाचार–पत्र में प्रकाशित नहीं हुई हो।

4. ऑल इन हैंड– इस वाक्यांश का प्रयोग तभी किया जाता है जब समाचार पत्र किसी एक संस्करण के लिए सारी लिखित सामग्री सम्पादकीय विभाग से कंपोजिंग के लिए मुद्रण विभाग में भेज दी जाती है। हिन्दी में इसके लिए 'पूर्ण प्रेषित' वाक्यांश का प्रयोग किया जा सकता है।

5. ऑल अप– इसका प्रयोग मुद्रण विभाग तब करता है जब किसी एक संस्करण की समस्त पांडुलिपियां कंपोज हो जाती हैं।